जवाज़े ताज़ियादारी

मौलाना सैय्यद कल्बे जवाद नक़वी साहब क़िब्ला मद्दज़िल्लहुश्शरीफ

क़ालल्लाहु सुब्हानहू व तआला : ''वमन युअज़्ज़िमु शआइरल्लाहि फइन्नहा मन तक़वल कुलूब''

किताबे इलाही के मुताबिक़ अल्लाह की निशानियों की ताज़ीम दिलों की पाकीज़गी की अलामत है बल्कि ऐने इबादत है।

दरअसल कुछ चीज़ों में खुद अपनी ज़ाती कोई अज़मत नहीं होती लेकिन वही एक मामूली सी चीज़ जब किसी अज़ीम और क़ाबिले एहतेराम ज़ात या चीज़ की तरफ मन्सूब हो जाती है तो खुद उसमें भी अज़मत और इज़्ज़त पैदा हो जाती है एक आम फहम मिसाल से बात को इस तरह से समझाया जा सकता है एक मामूली सूत और धागे से पैर के मोज़े बुनते हैं और उनकी कोई इज़्ज़त नहीं होती अगर हमारा मोज़ा रखा हुआ हो और किसी का पैर पड़ जाए तो हमें कोई परवाह नहीं होगी लेकिन उसी सूत और धागे से हमारा कुर्ता बनता है अगर वह कहीं रखा हुआ हो और कोई उसे पैरों से रौंदे तो उधर कुर्ते पर शिकन पड़ी इधर हमारे माथे पर शिकन पड़ जाएँगीं अचानक ज़बान से निकलेगा ''देखकर नहीं चलते? क्या आखें नहीं हैं?'' मोज़े पर किसी का पैर पड़ा हमने ध्यान भी न दिया लेकिन अगर कुर्ते या क़मीस पर पड़ा तो हमें बुरा लग गया मगर लड़ाइ झगड़े की नौबत नहीं आयी लेकिन अगर कोई टोपी या सर की पगड़ी रखी हुई है और किसी ने ठोकर मार दी तो अगर एहसास हुआ कि जानबूझ कर मारी है तो लाठियाँ बंदूकें निकल आएँगी और मारने मरने के लिए तैयार हो जाएँगे। यह सब क्यों हुआ? अगर जिस माद्दे से मोज़े और जुराबें बनीं हैं उसी से कुर्ता बना है और उसी से सर की पगड़ी, फिर हमारे रद्दे अमल में फ़र्क़ क्यों हुआ? दरअसल सिर्फ निस्बत के बदल जाने से हमारा रवैया बदल गया। मोज़ों को क्योंकि पैरों से निस्बत है और पैर नीचे हैं इसलिए कोई इज़्ज़त नहीं लेकिन कुर्ते को क्योंकि सीने से निस्बत है लिहाज़ा शर्फ़ पैदा हो गया लेकिन पगड़ी को सर से निस्बत है इसलिए सर की बुलन्दी से उसे बुलन्दियाँ मिल गयीं। इसी मिसाल से साबित होता है कि कुछ चीज़ों में ज़ाती इज़्ज़त न होते हुए भी सिर्फ बुलन्द से निस्बत की वजह से अज़मत पैदा हो जाती है। दूसरी इससे बेहतर मिसाल यह हो सकती है कि ईंट, गारा, पत्थरों से हमने एक मकान बनाया और कहा कि यह हमारा मकान है तो कोई शर्फ पैदा नहीं हुआ लेकिन अगर उसी मसाले से एक दूसरा मकान बनाया, ईंटे भी वही हैं मसाला भी वही मुमकिन है मज़दूर और कारीगर भी वही हो लेकिन जब मकान बन के तैयार हुआ तो हमने कहा यह अल्लाह का घर है। मस्जिद से तो अहकाम बदल गए अब हालते नजासत में दाख़िल नहीं हो सकते दाख़िल हों तो दो रकात नमाज़े तहय्या मस्जिद में पढ़ें, जूते चप्पलें बाहर उतारें, दुनियावी गुफ्तगू मना है। सवाल यह है कि किस चीज़ ने यह फ़र्क़ पैदा कर दिया? अगर ग़ौर कीजिए तो सब कुछ वही है सिर्फ निस्बत बदल गयी क्योंकि अब निस्बत अल्लाह की तरफ है। इसलिए ज़मीन व आसमान का फ़र्क़ पैदा

हो गया। काबा भी उन्हीं पत्थरों से बना जिन से अरब के सब मकान बन रहे थे लेकिन जब इस घर को अल्लाह ने फरमाया मेरा घर है तो शर्फ इतना बढ़ा कि अम्बिया और अइम्मा के सर भी उसकी तरफ झुक रहे हैं। यह फ़र्क़ इसलिए हुआ कि मस्जिद बनायी तो हमने कहा यह अल्लाह का घर है ख़ुद अल्लाह ने आकर नहीं फरमाया कि यह मेरा घर है लेकिन काबा के लिए जब लिसाने क़ुदरत ने ख़ुद एलान किया कि यह मेरा घर है तो शर्फ की हद ही न रही।

तीसरी मिसाल यह दी जा सकती है कि आय–ए–मेराज में अल्लाह तआला ने इरशाद फरमाया : ''सुब्हानल्लज़ी असरा बिअब्दिही'' ले गया परवरदिगार अपने बन्दे को। इस सिलसिले में कहा गया कि अगर बन्दा कहा तो कौन सा शर्फ पैदा हो गया? सब ही अल्लाह के बन्दे हैं लेकिन ग़ौर किया जाए तो बहुत फ़र्क है। हमारा अपनी ज़बान से कहना कि हम अल्लाह के बन्दे हैं यह और है और ख़ुद लिसाने क़ुदरत किसी को मुहब्बत से कह दे मेरा बन्दा, तो बन्दगी को मेराज मिल जाती है। दूसरा फ़र्क़ यह है कि काबे में ख़ुद अपने ज़ाती फ़ज़ाएल न थे लेकिन जब अल्लाह ने उसे अपनी तरफ मन्सूब किया तो बहुत अज़मत बढ़ी मगर ज़मीन ही तक रहा लेकिन ख़ुद रसूल (स0) में ज़ाती फ़ज़ाएल भी मौजूद थे इसीलिए जब अल्लाह ने अपनी तरफ मन्सूब किया तो ''क़ाबा क़ौसैन औ अदना'' की मन्ज़िल तक पहुँच गये।

इन मिसालों से पता चला कि निस्बत की बड़ी अहमियत है। यह न देखिये किस चीज़ से है यह देखिये निस्बत किसकी तरफ है अब यह न कहिये कि ताज़िये को क्यों चूमते हो अलम के फ़रहरे की इतनी ताज़ीम क्यों है? यह तो मामूली काग़ज़ और बाँस की तीलियों से बने हैं, अलम का फ़रहरा आम कपड़े का बना हुआ है मैं कहता हूँ कि यह देखो निस्बत किसकी तरफ है। ताज़िये को निस्बत है रौज़–ए–इमामे हुसैन (अ0) की तरफ और अलम मन्सूब है अब्बासे अलमदार (अ0) से। इसी निस्बत से अज़मत पैदा हुई जिसने उन्हें सर पर रखने और आँखों से लगाने के लाएक़ बना दिया।

ताज़िया बनाने की हुरमत के सिलसिले में अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली (अ0) का एक क़ौल पेश किया जाता है : ''मन जद्ददा क़ब्रन औ मस्सल मिसालन फक़द ख़रज मिनल इस्लाम।'' तो यहाँ मस्सल मिसालन से किसी जानदार की तस्वीर या मूरती बनाना मुराद है वरना एक लिबास को सामने रखकर दूसरा लिबास बनाना हराम हो जाता और एक मकान के माडल को सामने रख कर वैसा ही दूसरा मकान बनाना नाजाएज़ हो जाता, मोलवी साहब को अपनी शेरवानी या क़बा दर्ज़ी के यहाँ नमूने के तौर पर भिजवाना बिदअत क़रार दिया जाता।

हाशिया बुख़ारी पर अल्लाम नूवी तहरीर करते हैं.................''हमारे अस्हाब और दूसरे उलमा का क़ौल है हैवान की तस्वीर बनाना शदीद हराम है क्योंकि इसमें ख़ुदा की मख़लूक़ से मुशाबेहत होती है लेकिन पेड़, ऊँट का कजावा या किसी ग़ैरे रूह की तस्वीर बनाना हराम नहीं है। इस तरह किसी ग़ैरे ज़ीरूह की तस्वीर रखना भी जाएज़ है।''

(हाशिया बुख़ारी जिल्द–2 पारह–28 पेज–880
मतबूआ निज़ामी, कानपुर)

अगरचे तिरमिज़ी शरीफ की एक रिवायत

से यह ज़ाहिर होता है कि ज़ीरूह की शबीह बनाना भी जाएज़ है : ''हज़रत आएशा फरमाती हैं कि जिब्रईल (अ0) मेरी तस्वीर एक रेशमी टुकड़े पर लाए और रसूल (स0) से कहा कि यह दुनिया और आख़रत में आपकी बीवी हैं।''

(जामे तिरमिज़ी जिल्द–2 पेज–228)

इसी तरह से सही बुख़ारी, सही मुस्लिम, सुनने अबुदाऊद, सुनने इब्ने माजा में रिवायत मौजूद है कि हज़रत आएशा के पास गुड़ियाँ मौजूद थीं जिनसे वह खेलती थीं। रसूल (स0) ने उन्हें देखा मगर मना नहीं किया। इसी तरह से हज़रत आएशा के पास एक घोड़े की मूर्ती भी थी जिसमें पर लगे हुए थे। रसूल (स0) ने देखा तो मुस्कुराने लगे और मना नहीं फरमाया।

(सुनने अबुदाऊद जिल्द–2 पेज–294)

कुर्आन मजीद में जनाबे सुलेमान (अ0) पैग़म्बर के लिए मौजूद है : ''यअ्मलून लहू मा यशाउ मिन महारीबिवं व तमासीलिवं व जिफानिन कलजवाबि व कुदूर्रिरासियात''

(सूर–ए–सबा आयत–13)

अल्लामा बैज़ावी, जारुल्लाह ज़मख़्शरी, जलालुद्दीन सुयूती वग़ैरा बड़े–बड़े मुफस्सिरीन ने लिखा है कि यह असल में अम्बिया और फरिश्तों की तस्वीरें थीं और उनका मक़सद यह था कि इनको देखकर लोग ज़्यादा इबादत करें।

इस बात से यह नतीजा निकला है कि जिन चीज़ों से इताअत और इबादते इलाही का शौक़ पैदा हो उनकी शबीहें बनाना कुर्आन की रू से जाएज़ है जबकि खुद उन चीज़ों की इबादत ख़याल में न हो। तो हम कब ताज़िये, अलम या जुलजिनाह की इबादत करते हैं? बल्कि यह तमाम चीज़ें निशानियाँ हैं उन कुर्बानियों की जो अल्लाह के रास्ते में दी गयीं जिनसे हक़ीक़त में इताअते इलाही और अल्लाह के रास्ते में कुर्बानी का जज़्बा जागता है।

काबा ख़ुद बैते मअ्मूर की शबीह है। इसी तरह हज के बहुत से अरकान जनाबे इब्राहीम व इस्माईल व जनाबे हाजरा के आमाल की शबीहें हैं। यह हरवला क्या है? जिस में एक ख़ातून की पैरवी में बड़े–बड़े जवाँ मर्द दौड़ते हुए चल रहे हैं दूसरे लफ़्ज़ों में अल्लाह की राह में एक माँ की कुर्बानी की शबीह बने हुए हैं तो अगर हम जनाबे अब्बास का अलम उठा रहे हैं जो एक अज़ीम वफादार की कुर्बानी की यादगार है तो क्या हर्ज है? अब सवाल यह है कि यह कैसे साबित हो कि सारे तबररुकाते अल्लाह की निशानियाँ हैं। इसका जवाब यह है कि कुर्आन मजीद में इरशाद है : ''वलबुद्न जअलनाहा लकुम मिन शआरिल्लाह'' हमने कुर्बानी के ऊँटों को तुम्हारे लिए अल्लाह की निशानियाँ क़रार दिया है। शआएर बहुवचन है शअीरा की और शअीरा उस चीज़ को कहते हैं जो किसी की याद दिलाए या किसी चीज़ की निशानी हो। क्योंकि यह जानवर उस अज़ीम कुर्बानी की याद दिलाते हैं जो जनाबे इब्राहीम (अ0) और जनाबे इस्माईल (अ0) ने मिना में पेश फरमायी इसी तरह तबररुकाते अज़ादारी उस कुर्बानी की याद दिलाते हैं जो फख़्रे इब्राहीम (अ0) और इस्माईल (अ0) इमामे हुसैन (अ0) ने कर्बला की सरज़मीन पर पेश फरमायी।

□ □ □